विचार बिन्दु

जिसने स्वयं को समझ लिया हो, वह दूसरों को समझाने नहीं जायेगा। –धम्मपद

इतिहास का सच अब फिल्म बनाने वाले बताने लगे हैं!

एक कल सिनेमाघरों की जगह मल्टीप्लेक्स आ जाने तथा सिनेमा के डिजिटल हो जाने के साथ उसके बड़े परदे से सिमट कर स्मार्टफोन की स्क्रीन आ जाने और ओटीटी प्लेटरफ़ॉर्म के प्रादुर्भाव से न केवल दर्शकों का सिनेमा देखने का अनुभव बदला है बल्कि फिल्मों का कलेवर भी बदल गया है। इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक में फिल्मों का एक नया दौर शुरू हुआ है जिससे निःसंदेह भारतीय सिनेमा में फिल्मों के कथानक तथा उनके प्रस्तुतिकरण में भी विविधता आई है। ऐसे विषय जो कभी वर्जनाओं की श्रेणी में आते थे अब फिल्मों में आम हो चले है, वे चाहे यौन सम्बन्ध हों, नग्नता हो या हिंसा हो। पिछली सदी के हिन्दी सिनेमा के स्वर्णकाल की मासूमियत का स्थान वैचारिक बौद्धिकता ने ले लिया है। अब साइकोलॉजिकल थ्रिलर, बायोपिक, डार्क कॉमेडी, क्राइम ड्रामा, पैन-इंडियन ऐक्शन और नजदीकी समय के इतिहास का एक खास मकसद से प्रस्तुतिकरण चलन में है। कभी बुद्धिजीवियों को बड़ी शिकायत रहती थी कि भारत में राजनीतिक सिनेमा नहीं बनता। ऐसी बातें करने वाले लोग अधिकतर वाम पक्ष की ओर झुकाव रखने वाले होते थे। फिर धीरे-धीरे समांतर सिनेमा आया और उसके आगे की शृंखला में राजनीतिक सिनेमा का उद्भव हुआ। उनके एक तरह के नज़रिये वाली खूब फिल्में बनी। फिर देश में अचानक सत्ता की राजनीति में उलटफेर हो गया। भारत के मतदाताओं ने उन्हें चुन लिया जो वैचारिक धरातल पर प्रतिगामी माने जाते रहे थे। ध्रुवीकरण की राजनीति में जब वाम पक्ष के सामने वाला दूसरा ध्रुव अपनी जड़ें जमा गया है और अब उसके नजरिये वाला राजनीतिक सिनेमा ताल ठोक रहा है। साथ ही सिने माध्यम प्रचार का उद्यम बन गया है। प्रतिद्वंद्वी चुनावी राजनीति के मौजूदा दौर में सिने-निर्माता और निर्देशक समकालीन इतिहास की कहानी को एक खास नजरिए में पिरो कर प्रस्तुत करके जन भावनाओं को उभारने के व्यापार में लगे हैं। ऐसे ही एक निर्माता, निर्देशक और लेखक है विवेक रंजन अग्निहोत्री जिन्होंने देश के हाल के इतिहास की फ़ाइलें खोली है। 'द ताशकंद फाइल्स' और 'द कश्मीर फाइल्स' के बाद अग्निहोत्री अब अपनी तीसरी फिल्म 'द बंगाल फाइल्स' लेकर आए हैं। अपनी तीनों फिल्मों के बारे में उनका दावा है कि वे समकालीन इतिहास का नया सच सामने लेकर आए हैं। फिल्में बनाने वाले इतिहासकार नहीं होते हैं। वे मनोरंजन के सौदागर होते हैं। वे जो ऐतिहासिक घटनाओं की कहानियां कहते हैं वह उनका अपने नज़रिये से लिखी होती हैं। हालांकि दर्शक इतिहास सीखने के लिए फिल्में देखने नहीं जाता, लेकिन सिनेमा एक ऐसा माध्यम है जिसमें मासूम दर्शक भावना में बह कर सिनेकार के दिखाए गए चुनिंदा वर्सन को सम्पूर्ण इतिहास मान लेता है। फिल्मी कथानक में कल्पना और हकीकत के बीच आम-दर्शन फ़र्क नहीं करता। ध्रुवीकृत राजनीति के माहौल में ऐसी फिल्मों को केप्टिव दर्शक मिल जाते हैं। आज का बाज़ार भी ऐसी फिल्मों को बढ़ावा देता है।

समीक्षकों का कहना है कि 'द बंगाल फाइल्स' इतिहास की संपूर्ण तस्वीर पेश नहीं करती बल्कि एक विशेष दृष्टिकोण को तीखे अंदाज़ में प्रस्तुत करती है। इसलिए उसमें इतिहास की पूरी सच्चाई नहीं है। 'द बंगाल फाइल्स' में जिन घटनाओं को केंद्र में रखा गया है उनके बारे में यह बेतुका दावा किया गया है कि अब तक ये घटनाएं दबा दी गई थी। बंगाल में 1946 में मोहम्मद अली जिन्ना के नेतृत्व में मुस्लिम लीग के 'डायरेक्ट एक्शन' के आव्हान पर बंगाल में हुई हिंसा के सारे पहलू हमेशा ही सार्वजनिक रूप से उपलब्ध रहे हैं। उस दौर और उन घटनाओं पर समकालीन अखबारों में भरपूर कवरेज के अलावा अब तक सैकड़ों किताबें और असंख्य लेख ही नहीं लिखे जा चुके हैं बल्कि विश्वविद्यालयों में अकादमिक अध्ययन भी हो चुके हैं। यदि कोई यह कहता है कि ये जानकारियां छुपा के रखी गई थी, सच नहीं है। अग्निहोत्री अपनी फिल्मों में इतिहास की घटनाएं लेते हैं मगर उतना ही सच दिखाते हैं जो एक विशेष वैचारिक राजनीति के अनुकूल होता है। सिनेकार एक विशिष्ठ वर्ग की भावनाओं को उभार कर वहीं से अपना दर्शक वर्ग बनाना चाहता है। कोई सिनेकार यदि ऐतिहासिक घटनाक्रम को अपनी फिल्म के कथानक में पिरोता है तो यह उसका विशेषाधिकार होता है कि वह कितना कहे और कैसे कहे! मगर उससे यह अपेक्षा जरूर होती है कि वह ऐतिहासिक संदर्भों में हर-फेर नहीं करे। ऑडियोविजुअल की शक्ति का उपयोग राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक जगत में हमेशा किया जाता रहा है। एडॉल्फ हिटलर जैसे नेताओं ने द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान फिल्मों को प्रचार उपकरण के रूप में सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया। रूसी क्रांति के बाद रूस में वामपंथी विचारधारा के अनुरूप समाज बनाने के लिए सिनेमा का उपयोग किया गया। जैसे-जैसे प्रौद्योगिकी परवान चढ़ती गई, राजनीतिक और आर्थिक ताकतों ने लोगों के दृष्टिकोण को बदलने और आकार देने में सिनेमा का उपयोग किया, चाहे वह अपने फायदे के लिए हो या लोगों के फायदे के लिए। पिछले दौर की जिन फिल्मों पर पालयनवादी होने की तोहमत लगाई जाती थी वे दर्शकों का मनोरंजन करने के साथ, उन्हें शिक्षित भी करती थी। हालांकि अनेक फ़िल्मकारों ने वर्ग संघर्ष और समाजवाद से प्रेरित कहानियां अपनी फिल्मों में कही किन्तु वे आज जैसी राजनीतिक फिल्में नहीं थी। उनमें मानवीय मूल्यों की बात थी। वे भी दर्शकों को सोचने पर मजबूर करती थीं। उन्हें दयालु बनाती थी। वे दूसरों की मदद करने और मानवता के लिए अच्छा करने के लिए प्रेरित करती थी। अब हर तरफ नफरत की आंधी है, हिंसा है। सिनेमा का जो दौर सुनहरा कहा जाता है उसमें कैसी भी फिल्म हो अंत में बुराई पर अच्छाई की जीत ही दिखाई जाती थी। फिल्में हिंसा के उन्माद से बचने की शिक्षा देती थीं; भावनाओं को जगाती थी; रुलाती और हंसाती थी तो साथ ही जीवन को जीने लायक बनाती थीं। सुनहरे दौर की फ़िल्में ज़्यादातर सामाजिक मुद्दों पर होती थीं- गरीबी, वर्ग-संघर्ष, गांव-शहर का टकराव, प्रेम, बलिदान, पारिवारिक रिश्ते आदि। उनका उद्देश्य होता था समाज को जोड़ना और आदर्श प्रस्तुत करना। मगर फाइल्स फ़िल्में इतिहास के विवादित और राजनीतिक प्रसंगों पर केंद्रित हैं – जैसे शास्त्रीजी की रहस्यमय मृत्यु (ताशकंद), कश्मीरी पंडितों का पलायन (कश्मीर), और बंगाल में नरसंहार (बंगाल)। इनका ढांचा अर्ध-डॉक्यूमेंट्री जैसा होता है। इंटरव्यू, वास्तविक घटनाओं के हवाले, डॉक्यूमेंटेशन, और तीखे संवाद – यानी भावनात्मक मेलोड्रामे पर जोर होता है। सुनहरे दौर में संगीत फिल्म का सबसे बड़ा आकर्षण होता था। गाने ही कहानी को आगे बढ़ाते थे। अब फाइल्स फ़िल्मों में संगीत लगभग नगण्य या बैकग्राउंड स्कोर तक सीमित है। इनमें संगीत नहीं बल्कि संवाद और दृश्य कथा का मुख्य आधार होते हैं। पहले सिनेमा एक तरह से मनोरंजन और नैतिक शिक्षा का माध्यम था। दर्शक थिएटर छोड़कर जाते तो उनके दिल में उम्मीद, संवेदना या आदर्श जगते थे। फाइल्स फ़िल्मों का उद्देश्य झकझोरना और एक विशेष दृष्टिकोण से सोचने पर मजबूर करना है। ये मनोरंजन की जगह आलोचना और ऐतिहासिक कलह को सामने रखती हैं। तब का सिनेमा राष्ट्र निर्माण की परियोजना से जुड़ा था। नेहरू युग की समाजवादी सोच का असर फिल्मों पर जरूर था मगर वह चुनावी राजनीति के उपयोग के लिए नहीं था। फाइल्स जैसी फिल्में समकालीन राजनीति और पहचान की बहस से पूरी तरह प्रभावित हैं। वर्तमान ध्रुवीकृत माहौल में इनकी स्वीकृति भी राजनीतिक दृष्टि से होती है। इस तरह 'द ताशकंद फाइल्स,' 'द कश्मीर फाइल्स' और 'द बंगाल फाइल्स' हिन्दी सिनेमा के भावुक, आदर्शवादी और गीत-संगीत प्रधान सुनहरे दौर से बिलकुल अलग हैं। ये सिनेमा को एक पॉलिटिकल थ्रिलर और ऐतिहासिक विमर्श का मंच बनाती हैं, जहां संवेदना से ज्यादा तथ्य, विचार और विवाद अहम हो जाते हैं।

एडॉल्फ हिटलर जैसे नेताओं ने द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान फिल्मों को प्रचार उपकरण के रूप में सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया। रूसी क्रांति के बाद रूस में वामपंथी विचारधारा के अनुरूप समाज बनाने के लिए सिनेमा का उपयोग किया गया। जैसे-जैसे प्रौद्योगिकी परवान चढ़ती गई, राजनीतिक और आर्थिक ताकतों ने लोगों के दृष्टिकोण को बदलने और आकार देने में सिनेमा का उपयोग किया, चाहे वह अपने फायदे के लिए हो या लोगों के फायदे के लिए।

फ़िल्में संस्कृति का आईना होती हैं हर फ़िल्म एक ख़ास संस्कृति में सेट और विकसित होती है। मुश्किल तब होती है जब छिछली राजनीति संस्कृति को व्याख्यायित करने लगती है। यह बाज़ार को मुफीद होता है। फिल्मों का उपयोग समुदायों के बीच संवाद और मेल-मिलाप की जगह नफरत और संघर्ष की भावनाएं उभारने में होने लगता है। हमारी संस्कृति की विविधता के बावजूद फिल्मों ने देशवासियों को एकजुट रहने में मदद की लेकिन अब फिल्में अलग-थलग करने लगी हैं। फिल्में आधुनिक दुनिया को पिछली पीढ़ियों से जोड़ती हैं। इसका एक अच्छा उदाहरण वियतनाम युद्ध की फिल्में हैं जो बताती हैं कि उस समय क्या हुआ था और आज की पीढ़ी को युद्ध के नकारात्मक महत्व को समझने में मदद करती हैं। कई सामाजिक मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि अब फ़िल्में हिंसा और दूसरे लोगों की पीड़ा को स्वीकार्य बनाकर लोगों में सहानुभूतिपूर्ण भावनाओं को खत्म कर रही हैं। दर्शकों की उदासीनता बढ़ रही है। नई पीढ़ी के दर्शकों को परदे पर खूनी हिंसा देखने में आनंद आता हैं क्योंकि प्रचार माध्यमों ने उन्हें इसी प्रकार तैयार किया है। पीड़ित की मदद न करने या हिंसा को सही ठहराने की यह प्रवृत्ति मीडिया द्वारा सहानुभूतिपूर्ण भावनाओं को असंवेदनशील बनाने के परिणामस्वरूप बढ़ी है। हालांकि फ़िल्मी भावुकता दर्शक को भीतर से नहीं हिलाती। लोग हॉल से बाहर निकल कर वही हो रहते। 'मेरे देश की धरती सोना उगले' गाना ख़ूब गाया गया। उपकार फिल्म सुपरहिट हो गई। उसे ढेर सारे अवार्ड मिले। पर उस भारत के गौरव-गान में सिनेमाई भावोत्तेजना काम न आई। किसानों के प्रति नज़रिया आज तक नहीं बदल पाया है। न लोगों का, न राज का। मगर फाइल्स जैसी फिल्में समकालीन इतिहास का जो बोध कराती है उससे सोशल मीडिया के जरिए इन्फ़्लुएन्सरों द्वारा बनाया जा रहा भ्रम जरूर पुख्ता होता चला जाता है।

–अतिथि संपादक,
राजेन्द्र बोड़ा
(वरिष्ठ पत्रकार एवं विश्लेषक)

अनेकता में एकता : भारत के सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की अनिवार्यता

डॉ. सुरेंद्रसिंह शेखावत

भारत की लोकतांत्रिक यात्रा में एकता और प्रगति के धागे हमेशा से आपस में गुंथे हुए हैं। 2025 में, जब देश आर्थिक असमानता और सामाजिक विभाजन की छाया से जूझ रहा है, हमें उन मूलभूत सिद्धांतों पर पुनर्विचार करना होगा जो हमें एकजुट रखते हैं। रोटी, कपड़ा, मकान, पढ़ाई और दवाई जैसे बुनियादी सवाल आज भी लाखों लोगों के लिए अनसुलझे हैं, जो हमारी न्यायपूर्ण समाज की आकांक्षा पर ठाहण लगाते हैं। फिर भी, इनका समाधान केवल प्रशासनिक कार्य नहीं है; इसके लिए राष्ट्रीय एकता और सहभागी लोकतंत्र में निहित सामूहिक संकल्प की आवश्यकता है। जैसा कि महात्मा गांधी ने स्वराज की लड़ाई के दौरान परिकल्पना की थी, सच्चा स्वराज-आत्म-शासन-इन बुनियादी जरूरतों को संबोधित किए बिना और जाति, समुदाय, संप्रदाय, वर्ग और क्षेत्रों में सामंजस्य स्थापित किए बिना फल-फूल नहीं सकता। भारत की अखंडता को बनाए रखने की यह शपथ गैर-परक्राम्य है और इसे हर नीति और विमर्श का आधार होना चाहिए, जो सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र का मार्ग प्रशस्त करे।

इन बुनियादी जरूरतों को प्राथमिकता देने की तात्कालिकता को कम करके नहीं आंका जा सकता। एक ऐसे देश में जहां हाल के राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार 20 करोड़ से अधिक लोग भुखमरी से जूझ रहे हैं, रोटी का वादा एक दूर का सपना लगता है। अनाज और सब्जियों जैसे आवश्यक सामानों पर मुद्रास्फीति का दबाव इस संकट को और गहरा करता है, जबकि ठाामीण संकट और शहरी प्रवास जटिलताएं बढ़ाते हैं। इसी तरह, कपड़ा सम्मान का प्रतीक है, फिर भी असंगठित क्षेत्रों में लाखों लोग सस्ते कपड़ों तक पहुंच से वंचित हैं, जो अक्सर स्वास्थ्य और आत्म-सम्मान को कमजोर करने वाले निम्न-गुणवत्ता वाले विकल्पों पर निर्भर करते हैं। आवास, यानी मकान, शहरी गरीबों के लिए एक मृगतृष्णा बना हुआ है, जहां झुग्गी-झोपड़ियों का अतिक्रमण और आसमान छूती रियल एस्टेट कीमतें परिवारों को विस्थापित करती हैं। शिक्षा और स्वास्थ्य सशक्तिकरण के दो स्तंभ हैं, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में सरकारी स्कूल संसाधनों की कमी से जूझ रहे हैं, और सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणालियां महामारी के बाद की कमजोरियों के कारण अभिभूत हैं।

इनका समाधान करने के लिए हमें प्राथमिकता-आधारित दृष्टिकोण अपनाना होगा, संसाधनों का सटीक और कुशल आवंटन करना होगा। सरकार की प्रमुख योजनाएं जैसे पीएम गरीब कल्याण अन्न योजना और आयुष्मान भारत ने प्रगति की है, लेकिन कार्यान्वयन में खामियां-भ्रष्टाचार, नौकरशाही की जड़ता और क्षेत्रीय असमानताएं-उनके प्रभाव को कमजोर करती हैं। एक प्रतिमान बदलाव की जरूरत है: पारदर्शी वितरण के लिए तकनीक का एकीकरण, पंचायती राज संस्थाओं जैसे स्थानीय निकायों को समाधान तैयार करने के लिए सशक्त करना, और नागरिक लेखा-परीक्षा के माध्यम से जवाबदेही सुनिश्चित करना। यह केवल कल्याणकारी सहायता तक सीमित नहीं है; यह आत्मनिर्भरता के निर्माण के बारे में है। उदाहरण के लिए, पढ़ाई से जुड़े कौशल विकास कार्यक्रम शिक्षा को रटने की प्रक्रिया से बदलकर व्यावसायिक सशक्तिकरण में तब्दील कर सकते हैं, जिससे नवीकरणीय ऊर्जा और कृषि-तकनीक जैसे टिकाऊ क्षेत्रों में रोजगार सृजित हो सकते हैं।

हालांकि, इन बुनियादी जरूरतों को अलग-थलग हल करना अदूरदर्शी होगा। सच्ची प्रगति राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में सर्वव्यापी भागीदारी सुनिश्चित करने में निहित है। भारत का लोकतंत्र समावेशिता पर फलता-फूलता है, फिर भी महिलाएं, हाशिए पर खड़े जाति समूह अक्सर उपेक्षित रहते हैं। राजनीतिक क्षेत्र, जो वंशवाद और धनबल से प्रभावित है, को और अधिक लोकतांत्रिक बनाना होगा। आरक्षण नीतियां, जो सकारात्मक हैं, को आर्थिक मापदंडों को शामिल करके विकसित करना होगा ताकि लाभ वास्तव में जरूरतमंदों तक पहुंचे। प्रशासनिक रूप से, नौकरशाही को अपनी औपनिवेशिक विरासत को त्यागना होगा और डिजिटल शासन को अपनाना होगा ताकि सेवाएं कश्मीर से कन्याकुमारी तक सुलभ हों। आर्थिक रूप से, सहकारी समितियां और स्वयं-सहायता समूह धन सृजन को लोकतांत्रिक बना सकते हैं, जैसा कि केरल के सामुदायिक स्वामित्व वाले उद्यमों के सफल मॉडल में देखा गया है।

सांस्कृतिक रूप से, भागीदारी का मतलब है बिना एकता को कमजोर किए विविधता का उत्सव मनाना । पर्व, भाषाएं और परंपराएं हमारी बहुलता की जीवनरेखा हैं, लेकिन इन्हें विभाजन का कारण नहीं बनाना चाहिए। महाराष्ट्र और तमिलनाडु जैसे राज्यों में भाषाई नीतियों पर हाल की बहसें एक संघीय भावना की आवश्यकता को रेखांकित करती हैं जो क्षेत्रीय पहचानों का सम्मान करती हो और राष्ट्रीय एकजुटता को मजबूत करती हो। इस ढांचे के केंद्र में ग्रासरूट से शीर्ष स्तर तक लोकतांत्रिक संस्थाओं को मजबूत करना है। 73वें और 74वें संवैधानिक संशोधनों ने स्थानीय शासन को सशक्त किया, फिर भी धन और कार्यों का विकेंद्रीकरण अधूरा है। ग्राम सभाएं और नगरपालिका वार्ड सामूहिक निर्णय लेने के केंद्र होने चाहिए, जहां गांधीवादी सर्वोदय और दीनदयाल उपाध्याय के अन्तोदय से प्रेरित परामर्शी प्रक्रियाएं हर आवाज को सुनने की अनुमति दें। उच्च स्तरों पर, संसद और राज्य विधानसभाओं को बहस को पुनर्जनन करना चाहिए, राष्ट्रीय मुद्दों पर द्विपक्षीय सहयोग को बढ़ावा देना चाहिए। न्याय वितरण को तेज करने के लिए न्यायिक सुधार यह सुनिश्चित करेंगे कि लोकतंत्र केवल चुनावी नहीं, बल्कि वास्तविक हो।

लेकिन इन सब से पहले, सबसे पवित्र संकल्प: प्रत्येक जाति, समुदाय, संप्रदाय, वर्ग और क्षेत्र को राष्ट्रीय एकता और अखंडता के प्रति निष्ठा की शपथ लेनी होगी। यह गैर-परक्राम्य है। पहचान की राजनीति के युग में, जहां वोट बैंक जाति और पंथ की रेखाओं पर बनाए जाते हैं, विखंडन हमारे धर्मनिरपेक्ष ताने-बाने को खतरे में डालता है। 1947 का विभाजन एक ऐसा निशान था जिसे हम विभाजनकारी बयानबाजी के माध्यम से फिर से खोलने का जोखिम नहीं उठा सकते। पूर्वोत्तर की उग्रवादी गतिविधियों से लेकर हृदयभूमि में जातिगत संघर्षों तक, अस्थिरता के बीज बोती है।

सर्वोच्च न्यायालय के हाल के संघवाद पर निर्णय हमें याद दिलाते हैं कि एकता संप्रभुता की नींव है। इसके बिना, सबसे ऊंची कल्याणकारी योजनाएं भी ध्वस्त हो जाती हैं। इस एकता को बढ़ावा देने के लिए संवाद, सहमति और सौहार्द की सिम्फनी की आवश्यकता है। यह जिम्मेदारी सभी हितधारकों पर आती है: राजनीतिक दलों को घोषणा पत्र की लड़ाइयों से ऊपर उठकर सुरक्षा और विकास पर साझा आधार बनाना होगा; सामाजिक संगठनों और एनजीओ को शहरी-ठाामीण विभाजन को पाटना होगा ; किसान यूनियनों जैसे दबाव समूहों को रचनात्मक रूप से संलग्न होना चाहिए । प्रेस, चौथे स्तंभ के रूप में, एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है-संघर्षों को सनसनीखेज बनाने के बजाय सुलह की कहानियों को उजागर करना। प्रशासकों को निष्पक्ष सुविधाकर्ता होना चाहिए, जबकि बुद्धिजीवी वर्ग को भी सकारात्मक आलोचना करनी चाहिए, अम्बेडकर के शिक्षा और समानता के माध्यम से जाति उन्मूलन की दृष्टि से प्रेरणा लेते हुए।

मीडिया की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, खासकर फर्जी खबरों और सोशल मीडिया के इको चैंबर के युग में। एक्स और व्हाट्सएप समूह जैसे मंच अक्सर ध्रुवीकरणकारी कथाओं को बढ़ाते हैं, हरियाणा में सांप्रदायिक दंगों से लेकर गुजरात में आर्थिक बहिष्कार तक। रामनाथ गोयनका जैसे लोगों से प्रेरित जिम्मेदार पत्रकारिता को तथ्य-जांच वाली रिपोर्टिंग को प्राथमिकता देनी चाहिए जो सामूहिकता और सदभावना को बढ़ावा दे। बुद्धिजीवियों ने भी विखंडन को रोमांटिक बनाकर गलती की है; इसके बजाय, उन्हें अनेकता में एकता की विचारधारा को पुनर्जनन करना चाहिए, इसे जलवायु प्रवास और डिजिटल विभाजन जैसी समकालीन चुनौतियों के अनुकूल बनाना चाहिए।

इतिहास गहन सबक देता है। स्वराज की लड़ाई एकरूप मार्च नहीं थी, बल्कि विरोधी ताकतों को संतुलित करने की एक मोज़ेक थी। तिलक की उठाता ने गोखले की नरमपंथी नीति को पूरक बनाया; शुरुआती काल में जिन्ना भी हिंदू-मुस्लिम एकता का रास्ता बना रहे थे हालांकि बाद में वे खुद रास्ता भटक गए ।नेताजी सुभाष बोस की आईएनए ने विविध रेजिमेंटों को एकीकृत किया, जबकि भारत छोड़ो आंदोलन ने सेठ साहूकारों से लेकर रजवाड़ों और किसानों को एकजुट किया। स्वतंत्रता के बाद भी, संविधान के रचनाकारों ने समाजवादी आदर्शों को पूंजीवादी आकांक्षाओं, संघवाद को केंद्रीय प्राधिकार के साथ समायोजित किया। इसी समन्वय की कला ने विरोधियों को सहयोगी बनाया, जिससे दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र जन्मा।

यदि हम आज सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की आकांक्षा रखते हैं, तो इस मार्ग का अनुकरण अनिवार्य है। सामाजिक लोकतंत्र का मतलब है असमानताओं का उन्मूलन: कमजोर और वंचित वर्ग को सशक्त करने के लिए भूमि सुधार, कॉरपोरेट बोर्ड में लैंगिक कोटा, और उच्च शिक्षा में हर वर्ग का आनुपातिक हिस्सा । आर्थिक लोकतंत्र में धन का पुनर्वितरण शामिल है बिना विकास को बाधित किए-प्रगतिशील कराधान, यूनिवर्सल बेसिक इनकम पायलट, और क्रोनी पूंजीवाद का मुकाबला करने के लिए एमएसएमई समर्थन। हाल के केंद्रीय बजट का बुनियादी ढांचे पर ध्यान स्वागत योग्य है, लेकिन इसे तटीय मेट्रो शहरों तक ही नहीं, बल्कि राजस्थान, बिहार और ओडिशा के महत्वाकांक्षी जिलों तक समान रूप से पहुंचना चाहिए।

चुनौतियां बहुत हैं। वैश्वीकरण की बाधाएं-स्वचालन से नौकरियों का विस्थापन, जलवायु परिवर्तन से कृषि का विनाश-हमारी लचीलापन की परीक्षा लेती हैं। सांप्रदायिक तनाव, जो गलत सूचनाओं से प्रेरित हैं, फिर भी, अवसर भी हैं: भारत की युवा जनसांख्यिकीय लाभांश, यदि शिक्षा और कौशल के माध्यम से उपयोग किया जाए, तो हम भारत की अर्थव्यवस्था को दुनियां में तीसरे नंबर तक ले जा सकता है। डिजिटल इंडिया टेलीमेडिसिन के माध्यम से दवाई तक पहुंच को लोकतांत्रिक बना सकता है, जबकि आत्मनिर्भर भारत कपड़ा और मकान के लिए स्थानीय विनिर्माण को बढ़ावा देता है।

निष्कर्ष में, भारत का नियति से संन्यास रोटी, कपड़ा, मकान, पढ़ाई और दवाई जैसे बुनियादी सवालों, सहभागिता और लोकतंत्र के प्रति पुनः समर्पण की मांग करता है, जो अटूट एकता द्वारा पवित्र हो। यह कोई यूटोपियन कल्पना नहीं, बल्कि एक व्यावहारिक रोडमैप है। प्रधानमंत्री से लेकर विपक्षी नेताओं तक, सभी को उदाहरण पेश करना चाहिए-शायद एक राष्ट्रीय एकता शिखर सम्मेलन के माध्यम से विविध आवाजों को एकत्र करके। सिविल सोसाइटी, एनजीओ और युवाओं को सकारात्मक जुटाव के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करके इस आव्हान को और बढ़ाना चाहिए। जैसा कि टैगोर ने गीतांजलि में सपना देखा था, आइए हम अपने राष्ट्र को वहां जागृत करें जहां मन भयमुक्त हो और सिर ऊंचा हो। केवल संवाद और सौहार्द के माध्यम से हम एक लचीला भारत बुन सकते हैं, जहां हर नागरिक स्वराज के फल में हिस्सेदारी करे। शपथ और कार्रवाई का समय अब है; आने वाली पीढ़ियां हमें हमारे शब्दों से नहीं, बल्कि हमारी एकता और गहरे लोकतंत्र से आंकेंगी।

डॉ. सुरेंद्रसिंह शेखावत,
(लेखक स्वतंत्र चिंतक है)।

बाबा रामदेवजी ने सदियों पहले छुआछूत व सांप्रदायिकता मिटाने पहल की थी

जुगल किशोर बिस्सा

शक्ति, भक्ति, आध्यात्मिकता और निस्वार्थ सेवा भाव की कर्मभूमि रामदेवरा में लोकदेवता बाबा रामदेवजी का ऐतिहासिक मेला श्रद्धा और उत्साह के साथ आरंभ हुआ। यह मेला प्रतिवर्ष दो बार आयोजित होता है और केवल राजस्थान ही नहीं, बल्कि पूरे देश-विदेश से लाखों श्रद्धालुओं को आकर्षित करता है।

करीब 600 वर्ष पूर्व बाबा रामदेवजी ने समाज से छुआछूत और सांप्रदायिकता जैसी कुरीतियों को मिटाने के लिए आंदोलन चलाया था। उन्होंने समानता, भाईचारा और एकजुटता का संदेश देकर समाज को नई दिशा दी। इसी कारण उन्हें जनसमस्या निवारक और अमरपुरुष के रूप में पूजा जाता है। हर वर्ष बाबा की सुदी दूज के अवसर पर समाधि पर गंगाजल व दुग्धाभिषेक किया जाता है और बाबा को स्वर्ण मुकुट अर्पित किया जाता है। सैकड़ों वर्षों से अखंड ज्योति प्रज्ज्वलित है, जो सामाजिक समरसता और सांप्रदायिक सद्भाव का प्रतीक बनी हुई है। इस बार भी लाखों श्रद्धालु दूर-दराज़ से रामदेवरा पहुंचे, वहीं देशभर के बाबा रामदेव मंदिरों में भी विशेष आयोजन किए जा रहे हैं। बाबा रामदेवजी को सनातन धर्म में भगवान श्रीकृष्ण का अवतार द्वारकाधीश और मुस्लिम समाज में पीरों के पीर रामापीर के रूप में मान्यता प्राप्त है। उन्हें निर्धन का धन, कोड़ियों को काया देने वाले, अंधों को आंखें देने वाले, निःसंतान को संतान देने वाले जैसी उपाधियों से सम्मानित किया गया है।

मंदिर परिसर और श्मशान भूमि का महत्व :- रामदेवरा का मंदिर परिसर मूलतः श्मशान भूमि क्षेत्र है, जहाँ स्वयं बाबा रामदेवजी ने समाधि ली थी। धार्मिक मान्यता है कि श्मशान भूमि में समाधि स्थल होना विशेष संदेश देता है, जीवन और मृत्यु के बीच समानता व अस्थिरता का बोध, जात-पांत और भेदभाव से परे होकर सबका एक ही धरती में विलीन होना, सांसारिक मोह-माया से परे निष्काम सेवा और परोपकार का महत्व। इसी कारण समाधि स्थल को मोक्ष और मुक्ति का प्रतीक माना जाता है, जहाँ हर धर्म, हर जाति और हर वर्ग का व्यक्ति बिना भेदभाव के दर्शन करने आता है। मेले के दौरान रामदेवरा में भजन संध्या, कथावाचन, लोकगीत-लोकनृत्य और भजन प्रतियोगिताएँ आयोजित की जा रही हैं। राजस्थान की लोक संस्कृति से जुड़े मांगणियार और लंगा कलाकार अपनी प्रस्तुतियों से श्रद्धालुओं को मंत्रमुग्ध कर रहे हैं। इसके अलावा झांकी प्रदर्शन, रामापीर की शोभायात्रा और ध्वजा यात्रा मेले के प्रमुख आकर्षण हैं।

श्रद्धालुओं की सुविधा और सुरक्षा के लिए प्रशासन ने विशेष इंतजाम किए। समाधि परिसर में सीसीटीवी कैमरे और बैरिकेडिंग लगाई गई। पुलिस, होमगार्ड और स्वयंसेवकों की विशेष ड्यूटी लगाई गई। अस्थायी बस स्टैंड, पार्किंग स्थल और पेयजल स्टॉल की व्यवस्था की गई। स्वास्थ्य विभाग की ओर से मोबाइल डिस्पेंसरी और प्राथमिक उपचार केंद्र स्थापित किए गए हैं। पंचायत समिति और स्वच्छ भारत मिशन की टीमें सफाई और स्वच्छता व्यवस्था सुनिश्चित कर रही हैं।

बाबा रामदेवजी की समाधि और मेले की धार्मिक परंपराओं का संचालन परंपरागत रूप से गादीपति परिवार करता है। समाधि पर दुग्धाभिषेक, स्वर्ण मुकुट चढ़ाना, आरती और पूजा-अर्चना की मुख्य जिम्मेदारी गादीपति निभाते हैं। मेला अवधि में देशभर से आने वाले संत-महात्माओं, जनप्रतिनिधियों और श्रद्धालुओं का स्वागत भी गादीपति परिवार की देखरेख में किया जाता है। समाधि की धार्मिक अनुशासन और परंपराओं की निरंतरता बनाए रखना उनकी महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। गादीपति परिवार ही समाधि की ओर से धार्मिक कार्यक्रमों की अगुवाई और आशीर्वचन प्रदान करता है।

रामदेवरा में मौजूद बाबा की समाधि।

जुगल किशोर बिस्सा,
वरिष्ठ पत्रकार।

राशिफल

पंडित अनिल शर्मा

बुधवार 10 सितम्बर, 2025

आश्विन मास, कृष्ण पक्ष, तृतीया तिथि, बुधवार, विक्रम संवत 2082, रेवती नक्षत्र सायं 4:03 तक, वृद्धि योग रात्रि 8:31 तक, विष्टि करण दिन 3:38 तक, चन्द्रमा आज सायं 4:03 से मेष राशि में संचार करेगा।

ग्रह स्थितिः सूर्य-सिंह, चन्द्रमा-मीन, मंगल-कन्या, बुध-सिंह, गुरू-मिथुन, शुक्र-कर्क, शनि-मीन, राहु-कुम्भ, केतु-सिंह राशि में।

आज भद्रा दिन 3:38 तक है। आज तृतीय और चतुर्थी का श्राद्ध है। आज चतुर्थी व्रत है। आज पंचक सायं 4:03 पर समाप्त होंगे। आज ईद-ए-मौलाद है।

श्रेष्ठ चौघड़ियाः लाभ-अमृत सूर्योदय से 9:19 तक, शुभ 10:51 से 12:24 तक, चर 3:29 से 5:02 तक, लाभ 5:02 से सूर्यास्त तक।

राहूकालः 12:00 से 1:30 तक। सूर्योदय 6:14, सूर्यास्त 6:34

मेष

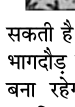

घर-गृहस्थी के खर्चों में अनावश्यक वृद्धि हो सकती है। पारिवारिक कार्यों के कारण भागदौड़ रहेगी। आज मन में असंतोष बना रहेगा। दिन मध्यान्ह पश्चात मानसिक तनाव से राहत मिल सकती है।

वृष

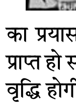

आर्थिक/वित्तीय मामलों को प्राथमिकता से करने का प्रयास करें। संभावित स्त्रोत से धन प्राप्त हो सकता है। व्यावसायिक आय में वृद्धि होगी।

मिथुन

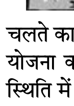

व्यावसायिक कार्यों के लिए दिन अच्छा रहेगा। चलते कार्यों में प्रगति होगी। नवीन कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा। आर्थिक स्थिति में सुधार होगा।

कर्क

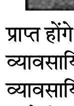

नवीन कार्यों के संबंध में सकारात्मक आश्वासन प्राप्त होंगे। अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। व्यावसायिक वार्ता सफल रहेगी। व्यावसायिक प्रयासों में उचित सफलता मिलेगी।

सिंह

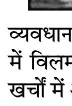

चन्द्रमा अष्टम भाव में शुभ नहीं है। शुभ कार्यों में व्यवधान हो सकता है। आवश्यक कार्यों में विलम्ब हो सकता है। व्यावसायिक खर्चों में अनावश्यक वृद्धि हो सकती है।

कन्या

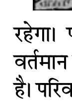

परिवार में आपसी सहयोग-समन्वय बना रहेगा। परिवार में आपसी सहयोग से वर्तमान समस्या का समाधान हो सकता है। परिवार में उत्सव जैसा माहौल रहेगा।

तुला

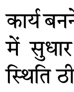

विवादित मामलों से राहत मिल सकती है। अटके हुए कार्य बनने लगेंगे। अस्त-व्यस्त दिनचर्या में सुधार होगा। व्यावसायिक/आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।

वृश्चिक

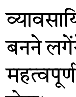

व्यावसायिक कार्यों पर ध्यान देना ठीक रहेगा। व्यावसायिक कार्य शीघ्रता/सुगमता से बनने लगेंगे। चलते कार्यों में प्रगति होगी। महत्वपूर्ण कार्य योजना का क्रियान्वयन होगा।

धनु

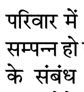

घर-परिवार में अतिथियों का आगमन बना रहेगा। परिवार में धार्मिक-सामाजिक समारोह सम्पन्न हो सकते हैं। व्यावसायिक कार्यों के संबंध में सकारात्मक आश्वासन प्राप्त होंगे।

मकर

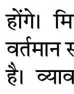

परिवार में मन को प्रसन्न करने वाले संदेश प्राप्त होंगे। मित्रों/रिश्तेदारों के सहयोग से वर्तमान समस्या का समाधान हो सकता है। व्यावसायिक संपर्क बनेंगे।

कुंभ

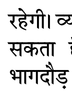

व्यावसायिक मामलों में लापरवाही ठीक नहीं रहेगी। व्यावसायिक कार्यों में विलम्ब हो सकता है। नौकरीपेशा व्यक्तियों को भागदौड़ रहेगी। स्वास्थ्य का ध्यान रखें।

मीन

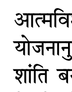

मानसिक तनाव से राहत मिलेगी। मनोबल-आत्मविश्वास बढ़ेगा। आवश्यक कार्य योजनानुसार बनने लगेंगे। परिवार में सुख-शांति बनी रहेगी। व्यावसायिक/आर्थिक स्थिति ठीक रहेगी।